G. E. Moore: 'Good' as a means and an end

जी० ई० मूर : 'शुभ'—साधन के रूप में तथा साध्य के रूप में

Revista Review Index Journal of Multidisciplinary | e-ISSN: 2583-0031
Double-blind peer-reviewed | Refereed Quarterly Online Journal
4(1) 118-120, 2024
©The Author(s) 2024
DOI: 10.31305/rrijm2024.v04.n01.014
https://rrijm.com/

Date of Publication: 31 Mar, 2024

*Dr. Rajanee Ranjan

Department of Philosophy, Rameshwar Mahavidyalaya, Muzaffarpur, (B.R.A. Bihar University, Muzaffarpur, Bihar)

Abstract: According to Moore, moral questions are often asked in two meanings, such as - 'What is a person's duty in these circumstances?' or "Is it right to do this?" or what should we strive for? Analysis of these questions is possible but any of them can be answered only by keeping in mind 'good in itself' and causal judgment - "A correct answer to any of them involves both judgements of what is good in itself and casual judgements" If we pay attention to intrinsic values and actions in the context of right and duty, this will become clear. If it is said that this action is the best, it means that this action along with its consequences has more intrinsic value than other actions.

Keywords: moral judgment, intrinsic value, generalization, expressions, moral question.

Abstract in Hindi Language: मूर के अनुसार नैतिक प्रश्न प्रायः द्वियर्थी रूप में पूछे जाते है यथा- 'इन परिस्थितियों में एक व्यक्ति का कत्तव्य क्या है?'' अथवा ''क्या ऐसा करना उचित है?'' अथवा हमें किस चीज के लिए प्रयत्न करना चाहिए? इन प्रश्नों का विश्लेषण संभव है परन्तु इनमें किसी का भी उत्तर 'स्वतःशुभ' तथा कारणात्मक निर्णय को ध्यान में रखकर ही दिया जा सकता है- "इनमें से किसी भी प्रश्न का सही उत्तर देने में यह निर्णय शामिल है कि क्या अपने आप में अच्छा है और क्या आकस्मिक निर्णय है।'' अधिकार तथा कत्तव्य के संदर्भ में यदि आंतरिक मूल्यों तथा कर्मों पर ध्यान दिया जाये तो यह बात स्पष्ट हो जाएगी। यदि यह कहा जाय कि यह कर्म सर्वोत्तम है, तो इसका अर्थ है कि यह कर्म अपने परिणामों के साथ अन्य कर्मों की अपेक्षा अधिक आंतरिक मूल्य धारण करता है।

Keywords: नैतिक निर्णय, आन्तरिक मूल्य, सामान्यीकरण, अभिव्यक्तियों, नैतिक प्रश्न

20 वीं शताब्दी का दार्शनिक दृष्टिकोण इस मान्यता को प्रश्रय देता है कि हमारी अधिकांश वैचारिक समस्याओं की जड़ में भाषा की अस्पष्टता है। नीतिशास्त्र में भी इस दृष्टिकोण को पर्याप्त महत्व मिला है, नीतिशास्त्रीय समस्याओं का विश्लेषणात्मक समाधान ढूँढ़ने की परम्परा की शुरूआत मूर ने ही की थी। उनके अनुसार प्रश्नों के स्वरूप को समझे बिना उनके उत्तर देने की प्रवृति हीं नैतिक समस्याओं को जन्म देती हैः— "In Ethics the difficulties and disagreement…….are mainly due to …..the attempt to answer questions, without first discovering precisely what questions it is which you desire to answer." इसी कारण मूर अपनी पुस्तक "Principia Ethica" के प्रथम अध्याय में ही नीतिशास्त्रीय विवेचनाओं का सर्वप्रमुख विषय—'शुभ' से संबंधित कई प्रश्नों का विश्लेषणात्मक स्पष्टीकरण करते है। इसी संदर्भ में वे नैतिक निर्णयों के विषय

*Corresponding Author
Dr. Rajanee Ranjan, Department of Philosophy, Rameshwar Mahavidyalaya, Muzaffarpur, (B.R.A. Bihar University, Muzaffarpur, Bihar)
Email: rajneeekta[at]gmail.com

Creative Commons Non Commercial CC BY-NC: This article is distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 License (http://www. creativecommons.org/licenses/by-nc/4.0/) which permits non-Commercial use, reproduction and distribution of the work without further permission provided the original work is attributed.

Access Online

को स्पष्ट करने के लिए 'साधन' के रूप में 'शुभ' (Good as means) तथा 'साध्य' के रूप में 'शुभ' (Good as end) के भेद को दर्शाते है।

मूर के अनुसार नैतिक निर्णय 'शुभ' को दो प्रकार से इंगित कर सकते है जिन्हें जान लेना नैतिक–निर्णयों के स्वरूप को समझने के लिए आवश्यक है%&"They may refer to good in two different ways, which it is very important to distiguish, if we are to have a complete definition of the range of ethical judgements". नैतिक निर्णय या तो 'शुभ' को किसी वस्तु–विशेष से संबद्ध घोषित कर सकते है, या वे किसी वस्तु को 'शुभ' के कारण अथवा आवश्यक शर्त के रूप में सिद्ध कर सकते हैं। यद्यपि ये दोनों प्रकार के निर्णय सर्वव्यापी निर्णयों के रूप में स्वीकार किये जाते है, फिर भी इनके भेद को समझना आवश्यक है अन्यथा कई समस्याएँ उत्पन्न हो सकती है। सामान्य भाषा में इस भेद को 'शुभ' साधन के रूप में तथा 'स्वतःशुभ' अथवा 'साधन के रूप में मूल्य' (Value of means) तथा 'आन्तरिक मूल्य' (Intrinsic value) के रूप में व्यक्त किया जाता है। मूर इस भेद को ही विश्लेषण द्वारा स्पष्ट करना चाहते है।

मूर का कहना है कि जब हम किसी वस्तु को साधन के रूप में शुभ मानते है तो यहाँ हमारा तात्पर्य एक कारणात्मक संबंध होता है, अर्थात् हम यह स्वीकार करते है कि यह वस्तु एक विशेष 'कार्य' को उत्पन्न करेगी तथा यह 'काय' अपने आप में शुभ होगा, परन्तु ध्यातव्य यह है कि इस प्रकार के कारणात्मक निर्णय (Casual Judgements) को सर्वव्यापी सत्य के रूप में स्थापित करना अत्यन्त कठिन है। ऐसा इसलिए कि प्रथमतः हम यह जानना चाहते है कि कैसे एक कर्म–विशेषं हर परिस्थिति में एक विशेष प्रभाव को ही उत्पन्न करेगा– "We require to know that a given action will produce a certain effect, under whatever circumstances it occurs". परन्तु ऐसा असंभव सा है क्योंकि भिन्न परिस्थितियों में एक ही कर्म भिन्न प्रभाव पैदा कर सकता है। परिणामस्वरूप हम एक सामान्य निर्णय (General Judgements) –" यह प्रभाव सामान्यता इस कर्म से उत्पन्न होता है"– ही दे सकते है। यह सामान्यीकरण भी तभी सत्य होगा जब कर्म की परिस्थितियाँ सामान्यतः समान ही रहे, परन्तु देश–काल के साथ परिस्थितियाँ बदलती रहती है, परिणामस्वरूप किसी कर्म को किसी प्रभाव विशेष को उत्पन्न करने हेतु साधन–रूप में शुभ मानने वाले निर्णय सर्वव्यापी सत्य नहीं हो सकते है– "With regard then to ethical judgements which assert that a certain kind of action as good as a means to a certain kind of effect, none will be universally true".

द्वितीयतः हम यह भी सिद्ध करना चाहते है कि इसी कर्म के परिणामों में शुभत्व अधिक होगा, दूसरे कर्म के साथ यह बात नहीं है, दूसरे शब्दों में किसी कर्म को साधरणतया शुभ का साधन मानने का अर्थ होगा कि परिस्थितियों के अनुसार सामान्यता यह अधिकतम शुभ उत्पन्न करेगा, परन्तु इसे सिद्ध करने के लिए कारणात्मक– श्रृंखला की अनगिनत कड़ियों का अध्ययन करना होगा, अतः हमारे लिए एक निश्चित कालावधि में जही अधिकतम संभव शुभ को जानने की संभावना रह जाती है– "It is indeed obvious that our view can never reach for enough for us to be certain that any action will produce the bost possible effects we must be content, if the greatest possible balance of good seems to be produced within a limited period".

उपर्युक्त निर्णयों के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी निर्णय हैं जो स्वतः शुभ वस्तुओं के विषय में अभिव्यक्ति देते है ये निर्णय सर्वव्यापक रूप से सत्य होते है– "There are judgement which state that certain kinds of things are themselves good……if true at all, they are all of them universally true".मूर हमें स्मरण दिलाते है कि 'साधन के रूप में शुभ' तथा 'स्वतःशुभ' संबंधी निर्णय भिन्न होते है तथा इनकी पहचान आवश्यक है क्योंकि दोनों की अभिव्यक्ति एक ही भाषा में होती है यथा–X शुभ है, परन्तु एक स्थिति में यह कारणात्मक स्वरूप वाला है, तो दूसरी स्थिति में यह साध्य की बात करता है। इस स्थिति में यदि हम शुभ–संबंधी इन दोनों निर्णयों के संबंध में स्पष्ट नहीं होगें तो हम अपनी अभिव्यक्तियों की सत्यता–असत्यता की निर्धारण समुचित रूप से नहीं कर पाएँगे। नैतिक निर्णयों में ऐसी भिन्नता को स्पष्ट करने के प्रयास नैतिक अध्ययनों में नहीं किए गए है, मूर के ही शब्दों में, "It is precisely this clearness as to the meaning of the questions asked which has hitherd been almost entirely lacking in ethical speculation.

मूर के अनुसार नैतिक प्रश्न प्रायः द्वियर्थी रूप में पूछे जाते है यथा– 'इन परिस्थितियों में एक व्यक्ति का कर्त्तव्य क्या है?" अथवा "क्या ऐसा करना उचित है?" अथवा हमें किस चीज के लिए प्रयत्न करना चाहिए? इन प्रश्नों का विश्लेषण संभव है परन्तु इनमें किसी का भी उत्तर 'स्वतःशुभ' तथा कारणात्मक निर्णय को ध्यान में रखकर ही दिया जा सकता है– "A correct answer to any of them involves both judgements of what is good in itself and casual judgements". अधिकार तथा कर्त्तव्य के संदर्भ में यदि आंतरिक मूल्यों तथा कर्मों पर ध्यान दिया जाये तो यह बात स्पष्ट हो जाएगी। यदि यह कहा जाय कि यह कर्म सर्वोत्तम है, तो इसका अर्थ है कि यह कर्म अपने परिणामों के साथ अन्य कर्मों की अपेक्षा अधिक आंतरिक मूल्य धारण करता है। मूर के अनुसार निम्नांकित तीन में से किसी उदाहरण में यह स्थिति स्पष्ट हो सकती हैः–

(1) किसी अन्य विकल्पों की अपेक्षा कर्म के अपने आंतरिक मूल्य महत्तर हैं जबकि इसके तथा दूसरे विकल्प के परिणामों में न तो आंतरिक गुण है, न आंतरिक दुर्गुण।

अथवा

(2) यद्यपि इसके परिणाम आंतरिक रूप से अशुभ है फिर भी ये वैकल्पिक कर्म के परिणामों की अपेक्षा ज्यादा आंतरिक मूल्य के है ।

अथवा

(3) इसके परिणाम आंतरिक रूप से शुभ है।

सारांशतः किसी कर्म को पूर्णतः उचित ठहराने का अर्थ है कि इसके करने से अधिक शुभ तथा न्यून अशुभ की प्राप्ति होगी इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि कर्मों के परिणामों का अध्ययन कारणात्मक निर्णयों के अन्तर्गत किया जा सकता है।

इसी प्रकार, 'हमें किसे प्राप्त करने का लक्ष्य रखना चाहिए? प्रश्न का उत्तर कारणात्मक निर्णय द्वारा संभव है। इस प्रश्न का जबाव प्राप्त करने योग्य वस्तुओं का वर्णन कर दिया जा सकता है परन्तु हर चीज प्राप्य नहीं है, इसके बावजूद जो भी प्राप्य है उसे तथा उसके मूल्य को साध्य को रूप स्वीकार करना आवश्यक है। इसी आधार पर मूर कहते है कि हमारे कर्त्तव्य तथा इसके लक्ष्यों संबंधी निर्णय आंतरिक मूल्यों के शुद्ध निर्णय नहीं होते हैः– "Neither our judgement as to what actions we ought to perform, nor even our judgements as to the ends which they ought to produce, are pure judgements of intrinsic value".

यदि कर्त्तव्य पर विचार किया जाये तो एक संभावना यह भी स्पष्ट होती है कि इसका अपना कोई आंतरिक मूल्य नहीं भी हो सकता है। यदि इसे सत्कर्म कहा जाता है तो इसका अर्थ यह है कि यह सर्वोतम संभव परिणाम उत्पन्न करेगा। लक्ष्य के संबंध में यह कहा जा सकता है कि हमारे कर्मों के औचित्य सिद्ध करने वाले इन सर्वोत्तम संभव परिणामों के भी आंतरिक मूल्य सीमीत होते है अथवा ये भी स्वयं आंतरिक मूल्य रहित होकर किसी आंतरिक मूल्य वाले लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन हो सकते है। इस प्रकार 'कर्त्तव्य' तथा 'लक्ष्य प्राप्ति' संबंधी प्रश्न बिल्कुल भिन्न होते है । अतः यह आवश्यक है कि हम वस्तुओं के आंतरिक मूल्य तथा इन्हें प्राप्त करने के साधन की जानकारी प्राप्त करें।

चूँकि नीतिशास्त्र में इस प्रकार की भिन्नता पर ध्यान नहीं दिया जाता है, इसलिए नैतिक समस्याएँ सुलझ नहीं पाती है। इन भिन्नताओं की अनदेखी के कारण कुछ भ्रम पैदा हो जाते है जिनमें से दो तो सर्वव्यापी रूप से पाए जाते है या तो यह मान लिया जाता है कि कुछ भी आंतरिक मूल्य वाला नहीं है या यह स्वीकारा जाता है कि जो कुछ भी आवश्यक है उसे आंतरिक मूल्यों वाला आवश्य होना चाहिए। परिणाम स्वरूप आन्तरिक मूल्य तथा इसकी प्राप्ति के साधनों का अध्ययन समुचित रूप में नहीं हो पाया है, जबकि वास्तविकता यह है कि नैतिक शास्त्र का प्रमुख विषय साधन–साध्य अथवा आंतरिक मूल्य तथा उसे प्राप्ति के साधनों को स्पष्टतः भिन्न कर इनसे संबंधित प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत करना ही होना चाहिएः– "It must be admitted that the questions what is best in itself and what will bring about the bost possible, are utterly distinct that both belong to the actual subject-matter of Ethics".

इस प्रकार 'साधन रूप शुभ' तथा 'साध्य रूप शुभ' की अवधारणा का विश्लेषण कर मूर ने नीतिशास्त्रीय अध्ययनों का मार्ग प्रशस्त किया है।

संदर्भ सूचीः–

पाश्चात्य दर्शन का समीक्षात्मक इतिहास– या० मसीह
समकालीन पाश्चात्य दर्शन–वसन्त कुमार लाल
Some Reflections of Ethics – Dr. Ramendra
Philosophical Paper - G.E. Moore

How Cite this article?

Ranjan, R. (2024). G. E. Moore: 'Good' as a means and an end: **जी॰ ई॰ मूरः 'शुभ'-साधन के रूप में तथा साध्य के रूप में.** *Revista Review Index Journal of Multidisciplinary*, *4*(1), 118-120. https://doi.org/10.31305/rrijm2024.v04.n01.014